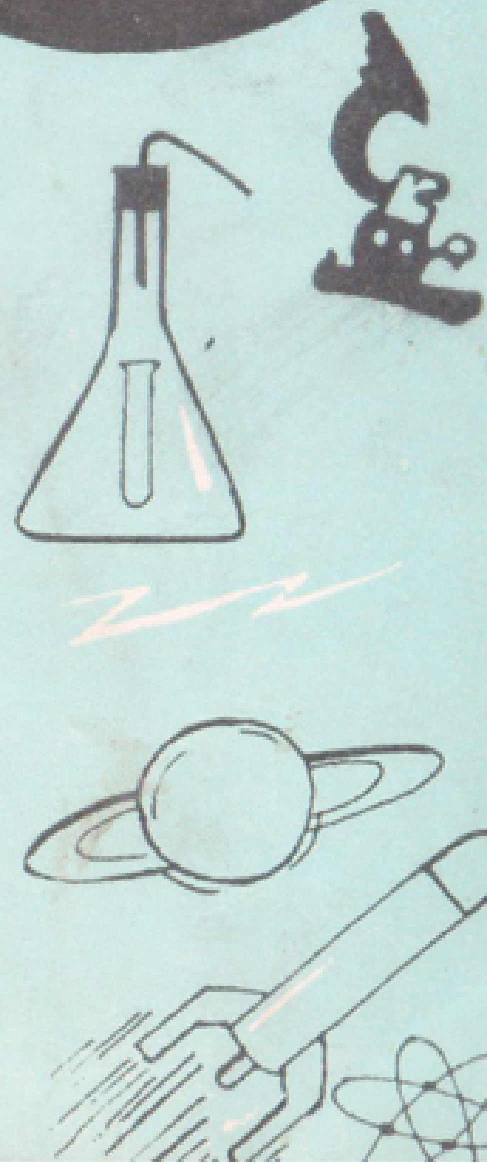
जीवन-ज्योति माला

चन्द्रशेखर वेंकट रामन

सन्तराम वत्स्य







चन्द्रशेखर वेंकट रामन

ज्ञान भारती, दिल्ली

दो शब्द

"विज्ञान की व्यक्तिगत शाखाओं और उनके विकास में योग देने वाले मुख्य वैज्ञानिकों की जीवनियों का अध्ययन विज्ञान के वास्तविक अर्थ और उसकी आत्मा को ठीक तरह समझने के लिये जरूरी है। उसके पढ़ने से हमें जो स्फुरणा प्राप्त होती है, वह प्रायः विज्ञान पर लिखे गए अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण औपचारिक ग्रन्थों से अधिक होती है।"

(चन्द्रशेखर वेंकट रामन)

नोबेल पुरस्कार विजेता जगत-प्रसिद्ध महान् वैज्ञानिक श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन के ये वाक्य ही इस 'जीवन ज्योति-माला' की प्रेरणा हैं।

'जीवन ज्योति माला' को इस प्रथम लड़ी में देश-विदेश के महान् वैज्ञानिकों की जीवनियां प्रस्तुत की जा रही हैं।

वैज्ञानिक सबसे अधिक जिज्ञासु लोग होते हैं। उनके मन में अपने चारों ओर की वस्तुओं के बारे में तरह-तरह के प्रश्न उठते हैं और वे उन प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए अनेक पुस्तकें पढ़ते हैं, उन वस्तुओं का बारीकी से निरीक्षण और परीक्षण करते हैं। 'क्यों ? और कैसे ?' का उत्तर ही हमारी सारी वैज्ञानिक खोजें हैं।

आज के युग को इन वैज्ञानिक खोजों के कारण ही 'विज्ञान का युग' कहा जाता है। इन खोजों के कारण ही आज हम अनेक सुख-सुविधाओं का उपभोग कर रहे हैं। कुछ दशक पूर्व असम्भव लगने वाली बातें आज इतनी साधारण हो गई हैं कि उनकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। रेल-मोटर, हवाई जहाज, बिजली, कैमरा, एक्सरे, सिनेमा, रेडिया-टेलीविजन, टेलीफोन, ग्रामोफोन, परमाणु बम और अन्तरिक्ष-यान आज हमें आश्चर्य-चकित नहीं करते। पर यदि इन खोजों को कहानी आप पढ़ें तो अवश्य चकित रह जाएं। तब आपको यह भी पता चल

जाएगा कि इन खोजों के पीछे अनेक वैज्ञानिकों की वर्षों की सतत साधना है। किसी वैज्ञानिक के मन में एक बात आयी और उसने परीक्षणों तथा प्रयोगों द्वारा उसका पता लगाना प्रारम्भ किया। उसी खोज को बाद के वैज्ञानिकों ने और आगे बढ़ाया और इस प्रकार अनेक वर्षों में वह कार्य पूरा हुआ। विज्ञान की एक-एक खोज में अनेक राष्ट्रों और युगों के व्यक्तियों का योग है।

ज्ञान का यह भण्डार पुस्तकों में हम सबको मिल सकता है, उससे लाभ उठाकर, हम नई खोजों और विज्ञान के नए चमत्कारों की दिशा में आगे से आगे बढ़ सकते हैं।

पुस्तकों में संचित ज्ञान का लाभ उठाकर, इसे सीढ़ी बनाकर नए आविष्कारों और खोजों तक पहुंचाने वाला आगामी युग का वैज्ञानिक कौन होगा? वह आप भी हो सकते हैं।

इन जीवनियों को पढ़कर यह स्पष्ट पता चल जाएगा कि वैज्ञानिक खोजें संयोगमात्र या किसी चमत्कार पर आधारित न होकर वर्षों के अथक परिश्रम का परिणाम हैं। इन जीवनियों को पढ़कर जहां हमें विज्ञान के सम्बन्ध में अनेक बातों का पता लगेगा, वहां उन गुणों से भी परिचय होगा, जिनके कारण वैज्ञानिक सफल हो सके।

विज्ञान के जिज्ञासुओं और छात्रों के लिए वैज्ञानिकों के जीवन-चरित्रों का अध्ययन बड़े महत्त्व का है। कुछ शिक्षा-शास्त्रियों का तो यह मत है कि विज्ञान की प्रारम्भिक शिक्षा वैज्ञानिकों के जीवन-चरित्रों द्वारा ही शुरू होनी चाहिए।

पाठकों की रुचि विज्ञान में बढ़े, वे जीवन में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएं और निरीक्षण और परीक्षण के अभ्यस्त बनें, इस आशा और विश्वास के साथ मैं इसे प्रस्तुत कर रहा हूं।

—सन्तराम वत्स्य

चन्द्रशेखर वेंकट रामन

आधुनिक युग में भारत के गौरव को बढ़ाने, उसकी कीर्ति-पताका को देश-देशान्तरों तक फहराने में जिन सपूतों ने कार्य किया है, आचार्य चन्द्रशेखर वेंकट रामन का उनमें महत्त्वपूर्ण स्थान है।

देश की दासता के उन दिनों में, जबकि विलायत जाकर पढ़े बिना कोई बात बनती ही नहीं थी, विशेष रूप से विज्ञान की शिक्षा तो वहां जाए बिना अधूरी ही समझी जाती थी और देश में विज्ञान की खोजों के लिए उपयोगी साज-सामान—प्रयोगशालाओं और यंत्रों का अभाव-सा था, उन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर ही वह कार्य कर दिखाया, जिसके लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया और संसार-भर में ख्याति मिली। वे एशिया के सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे जिन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ था। इनसे पूर्व कवीन्द्र रवीन्द्र को नोबेल पुरस्कार मिल चुका था किन्तु वह साहित्य के लिए था। इस प्रकार नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले वे दूसरे भारतीय थे।

भारत में जन्मे तीसरे वैज्ञानिक डॉ० हरगोविन्द खुराना को सन् १९६८ में यह पुरस्कार मिला है।

जन्म और शिक्षा

चन्द्रशेखर वेंकट रामन का जन्म ७ नवम्बर, १८८८ ई० को तमिलनाडु के प्रसिद्ध नगर त्रिचनापल्ली में हुआ था। उनके पिता चन्द्रशेखर अय्यर तंजोर जिले में स्थित अपने गांव से त्रिचनापल्ली में आ बसे थे। वे अंग्रेजी पढ़े-लिखे व्यक्ति थे और एक विद्यालय में अध्यापक थे। पढ़ाने के साथ-साथ वे स्वयं पढ़ भी रहे थे और बी० ए० की परीक्षा देने की तैयारी कर रहे थे।

रामन की माता श्रीमती पार्वती अम्मल त्रिचनापल्ली के ही एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में जन्मी थीं। उनके पिता का परिवार विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध था। अपने सुसंस्कार, धर्मनिष्ठा और ज्ञान के लिए सभी उस परिवार का आदर करते थे।

माता-पिता के श्रेष्ठ संस्कारों का बालक रामन पर बड़ा उत्तम प्रभाव पड़ा।

रामन के जन्म के बाद कुछ समय में ही, उनके पिता ने भौतिक विज्ञान में बी० ए० की उपाधि प्राप्त कर ली। अब वे एक स्थानीय कालेज में अध्यापक

नियुक्त हो गए ।

दक्षिण भारत में शास्त्रीय संगीत बहुत लोकप्रिय है । श्री चन्द्रशेखर अय्यर को भी संगीत का अच्छा अभ्यास था। वे वीणा बजाने में सिद्धहस्त थे । अवकाश के समय वे वीणा पर मधुर स्वर में राग-रागिनियां गाया-बजाया करते थे । घर के इस मधुर संगीतमय वातावरण का प्रभाव रामन पर भी पड़ा । संगीत की ओर उसकी रुचि बढ़ी। वह भी बचपन से ही संगीत का अभ्यास करने लगा । इस संगीत-प्रेम ने ही बाद में रामन को संगीत-वाद्यों के सम्बन्ध में वैज्ञानिक रीति से खोज करने को प्रेरित किया ।

जब रामन चार वर्ष के थे, उन्हीं दिनों श्री चन्द्रशेखर अय्यर त्रिचनापल्ली से विशाखापट्टम् चले गए । वहां हिन्दू कालेज में उनकी नियुक्ति लेक्चरार के पद पर हो गई थी । हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल श्री जी० टी० श्रीनिवास आयंगर अय्यर महोदय के मित्र थे और उन्होंने ही आग्रह करके उन्हें अपने कालेज में पढ़ाने के लिए बुला लिया था। श्री अय्यर ने श्री आयंगर के घर के पास ही घर ले लिया था। दोनों में बड़ा प्रेम था ।

श्री आयंगर अंग्रेजी भाषा के बड़े विद्वान थे । रामन के पिता श्री अय्यर का विषय गणित और

भौतिकी था। रामन को उसके पिता और पिता के मित्र से बड़ी सहायता मिली। उसने अंग्रेजी लिखना-पढ़ना और बोलना बड़ी जल्दी सीख लिया। रामन की बुद्धि बड़ी तेज थी। वह जो कुछ पढ़ता, उसे झट याद हो जाता। जहां दूसरे छात्रों को अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान न होने के कारण अंग्रेजी के माध्यम से पढ़ाए जाने वाले विषयों को समझने में कठिनाई होती थी, वहां रामन को अंग्रेजी भाषा पर अधिकार होने के कारण कोई कठिनाई नहीं होती थी। जहां दूसरे छात्रों का सारा समय पाठ्य-पुस्तकें पढ़ने में लग जाता था, वहां रामन कक्षा की पुस्तकों के अतिरिक्त भी अनेक पुस्तकें पढ़ जाता था। उसकी रुचि विशेष रूप से वैज्ञानिक विषयों में थी। छोटी अवस्था में ही उसने विज्ञान की अनेक पुस्तकें पढ़ ली थीं। वह अपने सहपाठियों से योग्य तो था ही, किन्तु अवस्था में भी उनसे कम था।

वह जब विज्ञान की कोई पुस्तक पढ़ता तो नई-नई बातें सीखने के साथ-साथ नए-नए प्रश्न भी उसके मन में उठते। उसकी नई-नई बातें जानने की इच्छा बढ़ती ही जाती। ज्ञान की इस बढ़ती हुई भूख को शान्त करने के लिए वह और पुस्तकें पढ़ता। इस प्रकार उसके ज्ञान में आशा से अधिक वृद्धि होती गई।

पर अधिक पढ़ने और भोजन-व्यायाम की ओर उचित ध्यान न देने के कारण रामन बीमार पड़ गया। बीमारी से स्वास्थ्य और भी गिर गया और पढ़ाई में रुकावट पड़ गई। रोग के ठीक होने और स्वस्थ होने में कई महीने लग गए।

यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि फिर भी बारह वर्ष की अवस्था में ही रामन ने दसवीं की परीक्षा बड़े अच्छे अंक लेकर वाल्टेयर कॉलेज से उत्तीर्ण कर ली। ठीक दो वर्ष बाद उसने प्रथम श्रेणी में एफ० ए० की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली। एफ० ए० में रामन ने विज्ञान विषय नहीं लिया था। बात यह थी कि इन दिनों सारे भारत में धार्मिक भावना की लहर उठ रही थी। स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, एनी बेसेन्ट इस धार्मिक जागरण के प्रवर्तक थे। एनी बेसेन्ट ने थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना कर दी थी और वे सारे भारत में धर्म-प्रचार के कार्य का विस्तार कर रही थीं। उनके भाषणों से प्रभावित होकर रामन का झुकाव भी धर्म की ओर हो गया था। उसकी विदुषी माता भी बड़ी धर्मनिष्ठा थीं। घर के धार्मिक वातावरण का प्रभाव तो पहले से ही उसके मानस पर था। एनी बेसेन्ट ने उसे और भी बढ़ा दिया। अब रामन धार्मिक ग्रन्थों को भी पढ़ने लगा। इन दिनों

उसने रामायण, महाभारत और गीता जैसे ग्रन्थ पढ़ डाले।

पिता ने इस होनहार बालक को बी० ए० की पढ़ाई के लिए मद्रास के प्रेसिडेंसी कॉलेज में भर्ती करा दिया।

प्रेसिडेंसी कॉलेज के बी० ए० के छात्रों में रामन कद और अवस्था—दोनों में सबसे छोटा था। उसे देखकर कोई भी यह नहीं समझ सकता था कि यह कॉलेज का छात्र है। वह देखने में स्कूल का छात्र ही दिखाई पड़ता था।

कॉलेज की पढ़ाई का पहला दिन था। प्राध्यापक छात्रों से परिचित नहीं थे। अंग्रेजी के प्राध्यापक श्री ई० एच० इलियट जब पढ़ाने के लिए कक्षा में आए तो उन्होंने उपस्थित छात्रों पर दृष्टि दौड़ाई। उनकी दृष्टि रामन पर जाकर टिक गई। उनके अनुमान से इतने छोटे कद और उम्र का लड़का बी० ए० का छात्र नहीं हो सकता था।

उन्होंने अपना सन्देह दूर करने के लिए रामन से पूछ ही लिया कि तुम किस कक्षा के छात्र हो। जब रामन ने नम्रतापूर्वक बताया कि मैं बी० ए० प्रथम वर्ष का छात्र हूं तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। इसके बाद उन्होंने उसकी उम्र, एफ० ए० कहां से पास किया

तथा नाम-धाम पूछा । रामन ने सभी प्रश्नों के ठीक-ठाक उत्तर दे दिए। रामन के आत्म-विश्वासपूर्वक दिए गए उत्तरों से प्रो० इलियट प्रभावित हुए । बाद में जब उन्हें और दूसरे प्राध्यापकों का रामन की योग्यता का पता लगा तो वे उस पर अधिक स्नेह दिखाने लगे और उसकी ओर विशेष ध्यान भी देने लगे ।

कॉलेज-प्रवेश के पूर्व जब यह प्रश्न उठा कि बी० ए० में क्या विषय लिए जाएं तो रामन के अतिरिक्त सभी इतिहास के पक्ष में थे। पर रामन विज्ञान लेना चाहता था । परिवार के लोग चाहते थे कि रामन पढ़-लिखकर बड़ा सरकारी अधिकारी बने । उन दिनों बड़े सरकारी पदों की भर्ती के लिए योग्यता परीक्षाएं होती थीं, उनमें विज्ञान विषय से कुछ सहायता मिलने वाली नहीं थी । इसीलिए सभी का मत विज्ञान के विरोध में था । उस समय तक विज्ञान पढ़े हुओं के लिए भारत की सरकारी सेवा में पर्याप्त अवसर नहीं थे । विज्ञान की पढ़ाई के लिए अच्छे कॉलेजों का भी अभाव था। पर रामन जानता था कि मेरा मन किस विषय में रमता है । उसने अपनी रुचि और प्रवृत्ति के विषय पर ही जोर दिया और अन्त में विज्ञान लेने का ही निश्चय हुआ ।

बी० ए० की पढ़ाई के दिनों में कॉलेज में एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। विषय था 'ऐतिहासिक काव्य'। रामन ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया और अपना निबन्ध प्रस्तुत किया।

निर्णायकों ने रामन के निबन्ध को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया और प्रथम पुरस्कार प्रदान किया।

दुबला-पतला, छोटे कद और कम उम्र का छात्र रामन थोड़े ही दिनों में अपनी प्रतिभा के बल पर छात्रों और प्राध्यापकों में लोकप्रिय हो गया। कॉलेज में पढ़ाई जाने वाली विज्ञान की पुस्तकें उसने पहले ही पढ़ डालीं। वह पुस्तकालय से लेकर और भी उच्च-स्तर की पुस्तकों का स्वतन्त्र अध्ययन करने लगा। पर इसमें एक कठिनाई थी। विज्ञान के प्रयोग की सुविधा रामन को नहीं थी। बात यह थी कि कॉलेज की प्रयोगशाला में जहां तक पढ़ाया जाता था, वहां तक ही प्रयोग करने की अनुमति थी। इसके अतिरिक्त कॉलेज की कक्षाओं में नियमित रूप से उपस्थित भी रहना पड़ता था। रामन के लिए ये दोनों ही नियम रुकावट पैदा करने वाले थे। क्योंकि जो कक्षा में पढ़ाया जाने वाला होता, वह उसे पहले ही याद होता और वहां तक प्रयोगों में उसके सीखने के लिए कुछ नहीं था।

कुछ समय बाद स्नेहशील अध्यापकों ने उसकी इस कठिनाई पर सहानुभूति से विचार किया। फलस्वरूप दोनों नियमों में रामन के लिए छूट दे दी गई। अब वह प्रयोगशाला में अपनी इच्छानुसार प्रयोग कर सकता था और उसके लिए कक्षा में उपस्थित रहना भी आवश्यक नहीं था। इस छूट का रामन ने बड़ा सदुपयोग किया और एक-एक क्षण का सदुपयोग करके विज्ञान के साथ-साथ गणित तथा यान्त्रिकी में भी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली।

१९०४ ई० में जब रामन की अवस्था केवल सोलह वर्ष थी, उसने बी० ए० की परीक्षा दे दी। जब परीक्षा-फल निकला तो प्राध्यापकों की आशा के अनुरूप ही रामन प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इतना ही नहीं, बी० ए० में विज्ञान विषय लेकर प्रथम श्रेणी प्राप्त करने वाले मद्रास विश्वविद्यालय के वे एकमात्र छात्र थे।

बी० ए० परीक्षा में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त करने के कारण उन्हें विश्वविद्यालय की ओर से पदक और पारितोषिक प्रदान किए गए। विशेष रूप से भौतिक विज्ञान में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के लिए अर्णी स्वर्णपदक प्रदान किया गया। अंग्रेजी में सुन्दर निबन्ध लिखने का अलग से पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस प्रकार

रामन को एक साथ कई पदक-पुरस्कार प्राप्त हुए।

ये पदक और पुरस्कार तो सम्मानों की उस शृंखला की प्रथम कड़ी मात्र थे, जो आगामी जीवन में प्राप्त होने वाले थे। बारह वर्ष की अवस्था में योग्यतापूर्वक दसवीं की परीक्षा पास करके रामन ने जो कीर्तिमान स्थापित किया था, उसे अभी तो बहुत ऊंचा उठना था, इतना ऊंचा कि राष्ट्र की सीमाओं को लांघकर सारी धरती पर अपना यश फैला सके। बाल-सूर्य की प्रभातकालीन किरणें भी ऊंचे पर्वत के शिखरों के ऊपर जा पड़ती हैं। रामन के जीवन का भी अभी सूर्योदय ही था। अपने प्रकाश से समस्त संसार को उज्ज्वल करने का यह शुभारम्भ मात्र था।

एम० ए० के लिए रामन ने इसी कॉलेज में नाम लिखवाया और भौतिक विज्ञान ही विषय लिया। बी० ए० में मिली हुई मनचाहे प्रयोग करने और इच्छानुसार कक्षा में उपस्थित रहने की सुविधा फिर मिल गई। इस स्वतन्त्रता का रामन ने पूरा-पूरा लाभ उठाते हुए समय का खूब सदुपयोग किया और अपनी योग्यता में पर्याप्त वृद्धि की।

उच्च स्तर के वैज्ञानिक साहित्य के अध्ययन और मनन के साथ-साथ प्रयोगों का क्रम भी जारी रहा।

किसी एक विषय को लेकर उस पर खोज करने का कार्य भी रामन ने प्रारम्भ कर दिया।

रामन ने वर्णपट मापक पर प्रयोग करते समय कुछ नया और असाधारण देखा। उसने अपने प्रयोग को बार-बार दोहराकर देखने का प्रयत्न किया और नवीन तथ्यों की बार-बार जांच-पड़ताल की। जब उसे हर बार के प्रयोगों में वे ही तथ्य मिले तो उसने उनका विधिवत् विवरण तैयार किया और उसे एक लेख के रूप में क्रमबद्ध रीति से प्रस्तुत किया।

यह निबन्ध उन्होंने अपने भौतिकी के प्राध्यापक श्री जोन्स को देखने के लिए दिया ताकि यदि वे आवश्यक समझें तो उसका संशोधन और परिष्कार कर दें।

जब कई दिन बीत गए और श्री जोन्स ने वह निबन्ध देखकर नहीं लौटाया तो रामन ने उन्हें याद दिलाई। वे फिर टाल गए। फिर याद दिलाई। इसी तरह जब कई मास बीत गए और वह निबन्ध वापस नहीं मिला तो रामन ने यह कहकर कि मैं इस निबन्ध को दोबारा ठीक से लिखूंगा, वापस ले लिया।

रामन इसे किसी वैज्ञानिक पत्रिका में प्रकाशित कराना चाहते थे। भारत में तब तक ऐसी एक भी

पत्रिका प्रकाशित नहीं होती थी। अन्त में लन्दन से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'फिलासॉफिकल मैगजीन' के सम्पादक को यह निबन्ध प्रकाशनार्थ भेज दिया। प्रो० जोन्स को इस बारे में रामन ने कुछ नहीं बताया।

सम्पादक ने लेख को प्रकाशनार्थ स्वीकार कर लिया। कुछ समय बाद लेख के प्रूफ संशोधन के लिए रामन के पास आए। इन प्रूफों को लेकर रामन श्री जोन्स को दिखाने गए।

यह जानकर कि रामन का लेख लन्दन की पत्रिका में छप रहा है, श्री जोन्स को आश्चर्य हुआ। उन्होंने बिना उनकी स्वीकृति लिए निबन्ध को प्रकाशनार्थ भेजने के लिए रामन के प्रति नाराजगी प्रकट की। रामन ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया, 'मैंने लेख तैयार होते ही आपको दे दिया था। इसके बाद कई मास वह आपके पास पड़ा भी रहा। मैंने कई बार आपको स्मरण भी कराया। अन्त में मैंने यही सोचा कि सम्भवतः लेख में लिखी बातों से आप सहमत हैं और उसमें किसी प्रकार का संशोधन नहीं करना चाहते। यही सोचकर मैंने उसे प्रकाशनार्थ भेज दिया।'

यह सीधा और स्पष्ट उत्तर सुनकर श्री जोन्स

को अपनी भूल समझ में आ गई। यथासमय लेख पत्रिका में प्रकाशित हुआ। किसी एम० ए० के भारतीय छात्र का निबन्ध प्रकाशित होने की यह सर्वप्रथम घटना थी। अभी रामन की अवस्था अट्ठारह वर्ष भी नहीं हुई थी।

एम० ए० की पढ़ाई के दौरान ही रामन ने एक और निबन्ध भी लिखा और वह भी प्रकाशित हो गया। एक बड़े वैज्ञानिक ने उसकी खूब प्रशंसा भी की। इस निबन्ध से सम्बन्धित शोध की कहानी भी मनोरंजक है।

रामन के एक सहपाठी अप्पाराव ध्वनि के सम्बन्ध में प्रयोग कर रहे थे। इन प्रयोगों को करते समय अप्पाराव को कुछ नई बातें दिखाई दीं। ये बातें पूर्व ज्ञात तथ्यों से कुछ भिन्न थीं। वह अपनी समस्या लेकर श्री जोन्स के पास गए। पर श्री जोन्स भी अप्पाराव की समस्या का समाधान खोजने में असमर्थ रहे। अप्पाराव ने अपनी समस्या रामन को बताई। रामन ने भी प्रयोग करके देखा। प्रयोग के तथ्यों की छानबीन करके रामन को पता लगा कि यह प्रयोग मेल्डी प्रयोग की ही एक नवीन विधि है। उसे यह भी ज्ञात हुआ कि नये प्रयोग द्वारा अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।

रामन ने मेल्डी प्रयोग की इस नवीन विधि का वर्णन लेखबद्ध करके प्रकाशनार्थ 'फिलासॉफिकल मैगजीन' के सम्पादक को भेज दिया। लेख प्रकाशित हो गया। इस लेख को पढ़कर ध्वनि-विज्ञान के प्रसिद्ध वैज्ञानिक टैले ने बहुत सराहा।

इस प्रकार रामन ने अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा का परिचय अपनी छात्रावस्था में ही दे दिया। इन लेखों के कारण रामन को ख्याति कॉलेज से बाहर और देश के बाहर फैल गई।

१९०७ ई० में रामन ने एम० ए० की परीक्षा दी और बड़े सम्मान के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। भौतिक विज्ञान में सर्वाधिक अंक प्राप्त करके उन्होंने नया कीर्तिमान स्थापित किया। उतने अंक तब तक उस विश्वविद्यालय में किसी छात्र को नहीं मिले थे। प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाले इस वर्ष वह एकमात्र छात्र थे।

इस होनहार प्रतिभाशाली छात्र को भौतिकी के क्षेत्र में विशेष अध्ययन के लिए विदेश भेजने का विचार विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने किया। उन्होंने सरकार से निवेदन किया कि इस छात्र को विलायत में विशेष अध्ययन के लिए सरकार की ओर से शोध-छात्रवृत्ति दी जाए। विश्वविद्यालय की बात सरकार ने मान

ली और छात्र-वृत्ति मिलना निश्चित हो गया।

यह श्री रामन की प्रतिभा का कमाल था कि भारतीयों के प्रति अनुदार तत्कालीन अंग्रेजी सरकार ने उन्हें छात्र-वृत्ति देना स्वीकार कर लिया।

विदेश में अध्ययन के लिए जाने से पूर्व डॉक्टरी परीक्षा होती थी। डॉक्टरी परीक्षा में पूर्ण स्वस्थ पाए जाने पर ही जाने की अनुमति मिलती थी। उन दिनों विमान-यात्रा तो अभी प्रारम्भ नहीं हुई थी। समुद्री मार्ग से जहाज द्वारा यात्रा करनी होती थी। इसमें कई-कई सप्ताह लग जाते थे। समुद्र की लहरों पर जहाज को हिचकोले लगने से यात्रियों को कै होने लगती थी और सिर में चक्कर आने लगते थे। दुर्बल स्वास्थ्य वालों के लिए यह यात्रा बड़ी कष्टदायक होती है।

श्री रामन को छोटी अवस्था से ही पढ़ने में बड़ा मजा आता था। इसके कारण वे भोजन और व्यायाम की ओर पूरा ध्यान नहीं दे पाते थे। डॉक्टरों ने परीक्षा करने के बाद सम्मति दी कि श्री रामन का स्वास्थ्य लम्बी समुद्री-यात्रा के कष्टों को सहन करने के योग्य नहीं है। इस कारण विलायत जाना सम्भव नहीं हो सका। विलायत न जा सकने के कारण श्री रामन को बड़ी निराशा हुई।

अत्यन्त मेधावी श्री रामन का मस्तिष्क जितना

तेज था, शरीर उतना ही दुर्बल । इस समय यद्यपि सभी को यह लगा कि शारीरिक दुर्बलता उनकी उन्नति के मार्ग में रुकावट बन गई है पर बाद में यह स्पष्ट हो गया कि बुद्धिबल ही श्रेष्ठ बल है। इसी के बलबूते पर उन्होंने विलायत में विज्ञान की विशेष शिक्षा प्राप्त किए बिना भी, वह कार्य कर दिखाया जो न केवल उनके लिए अपितु समूचे राष्ट्र और विश्व-मानवता के लिए भी गौरव का कारण बना। 'तेजसां हि न वयः समीक्षते' (तेजस्वी पुरुषों की उम्र नहीं देखी जाती) इस उक्ति को भी उन्होंने अपने जीवन में साकार कर दिखाया और छोटी उम्र में ही अपनी कीर्ति-पताका फहरा दी। बाल-रवि की किरणें जैसे ऊंचे पर्वत-शिखरों पर पहुंच जाती हैं, वैसे ही किशोर रामन की कीर्ति का प्रकाश भी दूर-दूर तक जा पहुंचा।

सरकारी नौकरी

पढ़ाई समाप्त हो गई थी। विदेश जाना रुक गया था। अब कोई उपयुक्त काम ढूंढ़ने की समस्या थी। ऊंचे पद वाली सरकारी नौकरियां प्रायः अंग्रेजों के लिए सुरक्षित रहती थीं। इनमें भारतीयों की नियुक्ति कम हो पाती थी। आई० सी० एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण भारतीयों को ऊंचे पदों पर नियुक्त किया

जाता था। ये सब लोग विलायत में शिक्षा लेते थे। केवल वित्त विभाग ही एक ऐसा विभाग था जिसमें आई० सी० एस० होने की शर्त नहीं थी। कोई अन्य उपाय न देख सबने यही सलाह दी कि वित्त विभाग की प्रतियोगिता परीक्षा में श्री रामन भाग लें। उनके विज्ञान के प्राध्यापक श्री जोन्स ने भी ऐसा ही करने की सलाह दी और उन्होंने इस कार्य में श्री रामन की सहायता भी की।

प्रतियोगिता परीक्षा को थोड़े ही दिन शेष थे। इस परीक्षा में विज्ञान की पढ़ाई से कोई सहायता मिलने वाली नहीं थी। इसमें अंग्रेजी, इतिहास, राज-नीति और अर्थशास्त्र जैसे विषयों की ही प्रधानता थी। श्री रामन ने खूब मन लगाकर परीक्षा की तैयारी प्रारम्भ कर दी। यह प्रतियोगिता अखिल भारतीय स्तर की थी और इसमें बड़े ही योग्य व्यक्ति सम्मिलित होते थे। ऊंची योग्यता वालों को ही सफलता मिलती थी। परीक्षा का केन्द्र कलकत्ता था।

इस परीक्षा की तैयारी के लिए लगभग एक मास का समय श्री रामन को मिला। परीक्षा के लिए निश्चित तारीख से दो-तीन दिन पूर्व ही वे कलकत्ता पहुंच गए।

परीक्षा से एक दिन पूर्व उन्हें एम० ए० की परीक्षा के परिणाम का तार मिल गया। एम० ए० की

परीक्षा में उन्हें बेजोड़ सफलता मिली थी। इससे उनका उत्साह दुगुना हो गया।

बड़े आत्मविश्वास से उन्होंने परीक्षा दी और परिणाम की प्रतीक्षा करने लगे। जब परिणाम की घोषणा हुई तो श्री रामन सारे प्रतियोगियों में फिर सर्वप्रथम आए। फलस्वरूप वित्त विभाग में डिप्टी एकाउंटेंट जनरल के पद पर उनकी नियुक्ति हो गई। अभी तक श्री रामन की अवस्था बीस वर्ष की भी नहीं हुई थी। यह प्रथम अवसर था कि इतने ऊंचे पद पर इतनी कम अवस्था वाले किसी भारतीय की नियुक्ति हुई हो।

श्री रामन का जीवन आश्चर्यकारी सफलताओं से भरा हुआ है। बारह वर्ष की छोटी अवस्था में दसवीं की परीक्षा सम्मानपूर्वक उत्तीर्ण करके उन्होंने अपने को सबसे अगली पंक्ति में और पंक्ति के अगले सिरे में रखने का जो शुभारम्भ किया था उसे अंत तक निभाते ही नहीं चले गए, अपने को अधिकाधिक चमकाते भी गए। कॉलेज की परीक्षा हो या नौकरी की प्रतियोगिता परीक्षा, सर्वप्रथम स्थान जैसे श्री रामन के लिए सुरक्षित हो गया था। वे अवस्था और योग्यता में अपवादस्वरूप थे। अवसर तो जैसे हाथ जोड़े उनकी प्रतीक्षा में खड़ा रहता था। और वे थे कि किसी भी

अवसर को पकड़ने में चूकते नहीं थे। एक-एक करके उन्नति की सीढ़ियां चढ़ते जाते थे। माता सरस्वती के इस वरद पुत्र का जीवन आगे बढ़ने वाले युवकों के लिए, विशेष रूप से छात्रों के लिए तो प्रेरणा का स्रोत ही है।

इन्हों दिनों श्री रामन का विवाह, समुद्री चुंगी विभाग के निरीक्षक श्री कृष्णस्वामी अय्यर की पुत्री त्रिलोक सुन्दरी के साथ सम्पन्न हो गया।

डिप्टी एकाउंटेंट जनरल केपद पर उनकी नियुक्ति कलकत्ता में हुई थी। पद का भार संभालते ही श्री रामन ने योग्यतापूर्वक कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उम्र में सबसे छोटा, देखने में दुबला-पतला यह नया अधिकारी, अपनी योग्यता के कारण सबके आदर का पात्र बन गया। श्री रामन तीन वर्ष तक कलकत्ता में रहे।

इंडियन साइंस एसोसिएशन में

कलकत्ता में एकाउंटेंट जनरल के पद पर कार्य करते हुए श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन घर पर वैज्ञानिक शोध-कार्य करते रहते थे। छुट्टी के दिनों में या प्रातः-सायं जब भी उन्हें समय मिलता, वे वैज्ञानिक शोध का कार्य करते रहते। यद्यपि वे ऊंचे सरकारी

पद पर कार्य कर रहे थे और उन्हें पर्याप्त वेतन मिलता था तथापि विज्ञान में उनकी रुचि रत्ती-भर भी कम नहीं हुई थी। सच तो यह है कि उनको अपनी रुचि का काम विज्ञान का क्षेत्र ही था। उनकी आत्मा विज्ञान में ही रमती थी। नौकरी के काम को वे पूरी तन्मयता से करते तो थे, पर उसमें कर्तव्य-भावना ही प्रमुख थी।

कलकत्ता में श्री रामन एक दिन ट्राम से अपने निवास-स्थान की ओर जा रहे थे। ट्राम की खिड़की में बैठे वे बाहर की ओर देख रहे थे। उनकी दृष्टि एक नामपट्ट पर पड़ी। उस नामपट्ट पर अंग्रेजी में लिखा हुआ था—'इंडियन एसोसिएशन फार द कल्टि-वेशन ऑफ साइंस'। इस नामपट्ट को पढ़कर वे बड़े प्रसन्न हुए और इस संस्था के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए ट्राम से उतर पड़े।

वे सीधे साइंस एसोसिएशन के कार्यालय में गए। वे जानना चाहते थे कि यह संस्था विज्ञान के लिए क्या कार्य करती है।

उस दिन एसोसिएशन की बैठक हो रही थी और उसमें अनेक वैज्ञानिक भाग ले रहे थे। बंगाल के सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री और समाजसेवी श्री आशुतोष मुकर्जी भी बैठक में उपस्थित थे।

श्री रामन को बैठक समाप्त होने तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। जब बैठक समाप्त हुई तो डॉ०अमृतलाल सरकार से बातचीत करके उन्होंने अगले दिन का समय भेंट के लिए निश्चित किया।

दूसरे दिन दोनों की भेंट निश्चित समय पर हुई। श्री रामन ने अपने विज्ञान सम्बन्धी प्रकाशित निबन्धों और कार्य का संक्षिप्त-सा विवरण डॉ० अमृतलाल सरकार को दिया। उन्होंने डॉ० सरकार को यह भी बताया कि इस क्षेत्र में बहुत-सा कार्य करने को पड़ा है और यदि सुविधा मिले तो वे स्वयं बहुत-सा कार्य करके दिखा सकते हैं।

डॉ० अमृतलाल सरकार इस नवयुवक के विदेशी पत्रिकाओं में प्रकाशित निबन्धों को देखकर और ऊंचे पद पर कार्य कर रहे इस सरकारी अधिकारी की विज्ञान के प्रति रुचि और उत्साह को देखकर बहुत प्रभावित हुए और प्रसन्न भी।

डॉ० सरकार ने इस उत्साही नवयुवक को शोध-कार्य के लिए प्रयोगशाला सम्बन्धी सुविधाएं देने का वचन भी दे दिया।

श्री रामन आज बहुत प्रसन्न थे। उनकी एक साध—अनुसन्धान के लिए प्रयोगशाला की सुविधा—पूरी हो गई थी। वे उसी दिन इस संस्था के सदस्य

बन गये और फिर बाद में तो श्री रामन और विज्ञान परिषद् का सम्बन्ध दिनों-दिन घनिष्ठ होता गया और इसके फलस्वरूप इन दोनों के साथ से विज्ञान के क्षेत्र में भारत का नाम बहुत ऊंचा उठा।

श्री रामन विज्ञान परिषद् के कार्यों में बहुत रुचि लेने लगे और इसकी उन्नति में योग देने लगे। विज्ञान परिषद् की प्रयोगशाला का सदुपयोग करते हुए श्री रामन को भी अपनी वैज्ञानिक शोधों को आगे बढ़ाने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

इस संस्था का सदस्य बन जाने के बाद श्री रामन का स्थानीय वैज्ञानिकों से परिचय भी बढ़ता गया। इस संस्था द्वारा भारत तथा बाहर के देशों में, विज्ञान के क्षेत्र में जो कार्य हो रहा था उससे भी वे परिचित हुए। अब विज्ञान की शोध के सम्बन्ध में उनका कार्य योजना-पूर्वक आगे बढ़ने लगा।

इसी संस्था के माध्यम से कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री आशुतोष मुकर्जी से आपका परिचय हुआ और धीरे-धीरे मैत्री में बदल गया। श्री आशुतोष इस युवा वैज्ञानिक से बहुत प्रभावित हुए। वे मनुष्यों के अद्वितीय पारखी थे। योग्य व्यक्तियों को खोज-खोज कर वे कलकत्ता विश्वविद्यालय में नियुक्त करते थे।

विज्ञान परिषद् की प्रयोगशाला में श्री रामन ने

जो शोध-कार्य किया, वह समय-समय पर परिषद् से प्रकाशित होने वाले बुलेटिनों में प्रकाशित होता रहा। इससे उनके कार्य से सारा विज्ञान-जगत् तो परिचित हुआ ही, साथ ही परिषद् की ख्याति भी बढ़ गई। श्री रामन की प्रसिद्धि भी बढ़ने लगी।

तीन वर्ष तक कलकत्ता में काम करने के बाद आपकी बदली रंगून (बर्मा) हो गई (उस समय तक बर्मा भी ब्रिटिश भारत का ही एक भाग था)। साइंस एसोसियेशन से सम्पर्क टूटने का उन्हें बड़ा दुःख था। पर विवशता भी थी। प्रयोगशाला की जो सुविधा उन्हें कलकत्ता में मिली हुई थी, वह छूट गई। रंगून में वैसी सुविधा मिलने की कोई सम्भावना नहीं थी। पर वहां भी श्री रामन ने शोध-कार्य चालू रखा। वे घर पर ही निजी प्रयोगशाला में अवकाश मिलने पर शोध-कार्य करते रहते।

यहां से फिर उनकी बदली हुई। अब वे नागपुर में भेजे गए।

उन्हें नागपुर भेजने का एक विशेष कारण था। वहां के कार्यालय में बड़ी अव्यवस्था थी। काम समय पर नहीं होता था और तरह-तरह की शिकायतें आती थीं। वहां इस विभाग का जो अधिकारी था, वह स्वयं न तो काम करता था, न काम की देखभाल।

वह अपने नीचे के अधिकारियों पर काम छोड़े रखता। ऊपर के अधिकारी की काम के प्रति उपेक्षा से वे भी लापरवाह हो गए और उनके नीचे के कर्मचारी भी। इसी कारण वहां के कार्यालय में अव्यवस्था और अनुशासनहीनता पैदा हो गई थी।

श्री रामन ने ज्यों ही कार्यभार संभाला, कार्यालय की बिगड़ी हुई स्थिति उनकी आंखों के सामने स्पष्ट हो गई। वे मन में बड़े क्षुब्ध हुए। उन्होंने मन में निश्चय किया कि मैं इस सारी अव्यवस्था को दूर करके ही चैन लूंगा।

उन्होंने गुप्त रूप से अव्यवस्था, अनुशासनहीनता और काम पड़े रहने के कारणों की जांच करनी प्रारंभ कर दी। कारणों की छान-बीन के बाद उन्होंने सुधार का कार्य प्रारंभ कर दिया। स्वयं देर तक कार्यालय में बैठने लगे और छोटे अधिकारियों को भी पिछला अधूरा काम निपटाने का आदेश दिया। नियम-पालन में ढिलाई उन्हें सह्य नहीं थी। व्यवस्था बनाये रखने के लिए, नियमों की अवहेलना करने वालों को दण्डित करने की विधि उन्होंने अपनायी।

इतने दिनों से मौज मना रहे कर्मचारियों को यह नया अधिकारी अखरने लगा। वे सुस्त और कामचोर हो चुके थे। अब जब काम करना पड़ा तो उन्हें बुरा

लगा । उन्होंने श्री रामन के कठोर व्यवहार की शिकायतें और ऊंचे अधिकारियों से करनी शुरू कर दीं। वे श्री रामन के विरुद्ध प्रचार करने लगे । पर श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन इससे जरा भी विचलित नहीं हुए और पूरी दक्षता से अपने पद के कर्त्तव्यों का पालन करते रहे। उन्होंने कार्यालय से सम्बन्धित समस्त जानकारी एकाउंटेंट जनरल को लिख भेजी।

एकाउंटेंट जनरल ने पूरी छान-बीन करने के बाद श्री रामन की कार्यवाही का पूरा-पूरा समर्थन किया। यही नहीं, उन्होंने श्री रामन की कर्त्तव्यनिष्ठा और योग्यता की सराहना भी की।

श्री रामन को यद्यपि ऊंचा पद और वेतन मिल गया था और वे पूरी तरह अपने कार्य को कर रहे थे, फिर भी उन्हें विज्ञान में पूरी-पूरी रुचि थी। वे घर पर विज्ञान के प्रयोग, अध्ययन और शोध का कार्य करते रहते थे। उनका मनचाहा क्षेत्र तो विज्ञान ही था। वहीं उनका मन रमता था। एम०ए० में सभी के मना करने पर भी उन्होंने विज्ञान विषय लिया था। यही कारण था कि बड़े उत्तरदायित्व के पद पर कार्य करते हुए भी उन्होंने विज्ञान को छोड़ा नहीं। जब भी समय मिलता, वे विज्ञान की साधना में लग जाते।

श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन ऊंचे पद पर प्रतिष्ठित सरकारी अधिकारी थे, विज्ञान के साधक तो थे ही, इससे भी बढ़कर वे ऊंचे मानवीय गुणों के भण्डार थे। दीन-दुखियों के प्रति उनके मन में अत्यन्त सहानुभूति थी।

जिन दिनों वे रंगून से नागपुर आये थे, उन्हीं दिनों नगर में प्लेग की महामारी फैली हुई थी। लोग बड़ी संख्या में प्रतिदिन मौत के ग्रास बन रहे थे। जो जीवित थे, उन्हें भी मौत सामने खड़ी दिखाई देती थी। छूत के इस भयंकर रोग से सभी भयभीत थे। असहाय रोगियों की देखभाल करने वाला कोई नहीं था। सरकार की ओर से भी पर्याप्त प्रबन्ध नहीं था। चारों ओर निराशा और भय छाया हुआ था। सारे नगर पर मौत की काली छाया मंडरा रही थी।

इस भयानक संकट को देखकर श्री रामन का हृदय पसीज उठा। उन्होंने रोगग्रस्त लोगों की सेवा-सहायता करने का निश्चय किया। उनके आगे बढ़ने पर कई दूसरे लोग भी उनके सहयोगी बन गए। श्री रामन का बंगला इस सेवा-कार्य का केन्द्र बन गया। उन्होंने अपने खर्च से तम्बू लगवाकर लोगों को आश्रय दिया। रोगियों की देखभाल और दवा-दारू की उचित व्यवस्था की। उन्होंने सरकारी अधि-

कारियों को भी प्रेरित किया जिससे सरकारी स्तर पर अधिक दवा-दारू की व्यवस्था हो सकी।

उन दिनों जो बड़े-बड़े सरकारी अधिकारी होते थे, वे प्रायः अपने को जनता का स्वामी समझते थे। जनता से मेल-जोल रखना और उनके दुःख-संकट में आगे बढ़कर सेवा-सहायता करना वे अपना कर्त्तव्य नहीं समझते थे। इसके विपरीत इस तरह के कार्यों को वे अपने पद और गौरव के लिए शोभनीय नहीं मानते थे। वे अपनी शान में ही खोये रहते थे। पर श्री रामन वैसे अधिकारियों में से नहीं थे। उनकी मानवीयता प्रशंसा के योग्य है।

डाक-तार विभाग के महालेखा परीक्षक के पद पर नियुक्ति

नागपुर में रहकर आपने अपनी कार्य-कुशलता का बड़ा अच्छा प्रमाण प्रस्तुत किया था। अव्यवस्थित कार्य सुचारु रूप से होने लगा था। इससे उनके ऊपर के अधिकारी बहुत प्रसन्न थे।

सन् १९११ के नवम्बर मास में आपको नागपुर से कलकत्ता बुला लिया गया। यहां श्री रामन की पदोन्नति करके उन्हें डाक-तार विभाग का महालेखा परीक्षक (एकाउंटेंट जनरल) बना दिया गया। तेईस

वर्ष की अवस्था में इस ऊंचे पद पर किसी भारतीय की नियुक्ति उस समय आश्चर्यकारक थी। पर योग्य व्यक्तियों की उम्र नहीं देखी जाती। यद्यपि उस समय के विदेशी शासक ऐसे ऊंचे पदों पर प्रायः अंग्रेजों को ही नियुक्त करते थे या विलायत में शिक्षित भारतीयों को जो आई० सी० एस० पास होते थे किन्तु योग्यता के कारण ही श्री रामन को यह पद दिया गया।

कलकत्ता बदली हो जाने से श्री रामन विशेष प्रसन्न थे। इसके दो कारण थे। एक तो उनकी पदोन्नति हो गई थी और कलकत्ता उस समय भारत की राजधानी थी। वह भारत का सबसे बड़ा नगर था। दूसरे, वहां पर वैज्ञानिक शोध के लिए अधिक सुविधाएं और सुअवसर प्राप्त हो सकते थे।

कलकत्ता में नये विभाग का कार्यभार संभालते ही श्री रामन बहुत व्यस्त हो गए। यहां भी उन्होंने अपनी कार्य-कुशलता का परिचय दिया। उनकी विशेषता यह थी कि जहां ऊपर के अधिकारी उनके कार्य के प्रशंसक थे, वहां उनके अधीन कार्य करने वाले भी उनके व्यवहार और सौजन्य से प्रसन्न रहते थे।

कलकत्ता आने पर वे फिर साइंस एसोसियेशन

के कार्यों में रुचि लेने लगे। पहले की ही तरह प्रयोग-शाला का उपयोग करने की सुविधा भी उन्हें मिल गई।

कलकत्ता में सन् १६११ से लेकर १६१७ तक श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन डाक-तार विभाग के एकाउंटेंट जनरल के पद पर कार्य करते रहे। इस बीच साइंस इन्स्टीट्यूट से और उसकी प्रयोगशाला से लगातार सम्पर्क बना रहा। इन वर्षों में उन्होंने अपनी योग्यता और कार्य-चातुरी से ऊंचे अधिकारियों को खूब प्रभावित किया। आपके विभाग में कार्य करने वाले सभी छोटे-बड़े कर्मचारियों का भरपूर सहयोग आपको मिला।

इस बीच १६१४ ई० में महान समाज-सेवी और शिक्षाशास्त्री सर आशुतोष मुकर्जी के सद्प्रयत्नों से, जो कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे, कलकत्ता में विज्ञान की उच्च शिक्षा और शोध के लिए साइंस कालेज की स्थापना की गई। इस कालेज की स्थापना में सर तारकनाथ पालित और डॉ० रासबिहारी घोष ने सर आशुतोष मुकर्जी को विशेष सहयोग दिया था। इस विज्ञान कालेज की स्थापना से भारत में विज्ञान-युग का शुभारम्भ हुआ था। सर तारकनाथ पालित ने इस कालेज के लिए एक बड़ी धनराशि प्रदान की थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने भौतिक विज्ञान के क्षेत्र

में विशेष शोध के लिए, धनराशि देकर स्थायी कोश की व्यवस्था कर दी, जिससे होने वाली आय द्वारा उनके नाम से 'पालित पीठ' की स्थापना कर दी गई थी।

इस प्रकार का पीठ स्थापित करने का अभिप्राय यह था कि किसी विशेष योग्यता वाले किसी विज्ञानाचार्य की सेवाएं उपलब्ध हो सकें और उन्हें इस कोश की आय से वेतन दिया जा सके।

कालेज में पीठ की स्थापना हो जाने के बाद इसके लिए उपयुक्त विज्ञानाचार्य की नियुक्ति का भार सर आशुतोष जी के ऊपर था।

सर आशुतोष मुकर्जी बड़े ही गुणग्राही व्यक्ति थे। वे मनुष्यों के पारखी जौहरी थे। अपने-अपने विषय के गण्यमान्य विद्वान ढूंढ़कर कलकत्ता विश्वविद्यालय की सेवा में नियुक्त करना उनका प्रिय कार्य था। उनके सत्प्रयत्नों से देश के उच्चकोटि के विद्वान कलकत्ता विश्वविद्यालय में नियुक्त हुए थे और देश-भर में इस विश्वविद्यालय का विशेष सम्मान था। न केवल कलकत्ता और बंगाल प्रदेश की उन्नति के लिए ही, अपितु समूचे देश में विश्वविद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा का मानदण्ड उन्होंने स्थापित किया था। इस विश्वविद्यालय में शिक्षित लोगों ने भारत माता के

गौरव को सब प्रकार से बढ़ाया है ।

पालित पीठ के लिए उपयुक्त व्यक्ति ढूंढ़ने में सर आशुतोष को बहुत दिन लग गए। कोई उपयुक्त व्यक्ति उन्हें मिल ही नहीं रहा था। इसी सोच-विचार में उनका ध्यान श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन की ओर गया ।

श्री रामन विज्ञान के प्रतिभाशाली छात्र रहे थे । उसके बाद भी वे घर में तथा साइंस इन्स्टीट्यूट की प्रयोगशाला में शोध-कार्य कर रहे थे। उनकी विज्ञान के प्रति इस निष्ठा से सर आशुतोष भली प्रकार परिचित थे और प्रभावित भी। पर सर आशुतोष को सन्देह था कि ऊंचे वेतन और पद को छोड़कर श्री रामन इस निमन्त्रण को स्वीकार करेंगे भी या नहीं । जो सुविधाएं श्री रामन को डाक-तार विभाग में उपलब्ध थीं, कालेज में नहीं मिल सकती थीं।

पर सर आशुतोष इस कठिनाई से निराश नहीं हुए । वे यह जानते और मानते थे कि मानव को प्रेरणा देने वाली महत्त्वपूर्ण वस्तुओं में धन का एकमात्र स्थान नहीं है। विज्ञान की साधना, प्रतिभाशाली छात्रों को शिक्षित करके योग्य बनाना, जिससे वे देश की उन्नति में सहायक बन सकें, कम महत्त्व की प्रेरणाएं नहीं थीं। दूसरी ओर श्री रामन की आत्मा तो विज्ञान में ही

रमती थी, यद्यपि वे अपने दूसरे कर्त्तव्यों का निर्वाह भी बड़ी निष्ठा और लगन से करते थे। यही उनकी महानता और सफलता का रहस्य था। कर्त्तव्यपरायण महानुभाव जो कुछ भी करते हैं, उसमें उनकी महानता प्रकट होती है।

सर आशुतोष मुकर्जी का प्रस्ताव भी श्री रामन ने स्वीकार कर लिया। ऊंचे वेतन और पद का लोभ उन्हें विज्ञान की सेवा करने से विमुख न कर सका। सर आशुतोष ने एक समस्या तो सुलझा ली पर एक और नई समस्या आ खड़ी हुई।

यह समस्या वह शर्त थी जो सर तारकनाथ पालित ने पीठासीन होने वाले आचार्य की नियुक्ति के नियमों में लगा रखी थी।

बात यह थी कि दासता के उन दिनों में, भारत विज्ञान के क्षेत्र में बहुत पिछड़ा हुआ था। विज्ञान की उच्च शिक्षा और शोध की देश में कोई व्यवस्था नहीं थी। विज्ञान का उच्च अध्ययन करने के लिए छात्र विदेशों में जाते थे और वहां की उपाधियां प्राप्त करते थे। इस तरह विदेशों में शिक्षित लोगों का विशेष मान होता था। दासता-जन्य इस कुचक्र के कारण कि देश में विज्ञान के अध्ययन की विशेष व्यवस्था नहीं, और देश में शिक्षा-प्राप्त लोगों का सम्मान नहीं—

विज्ञान और ज्ञान के दूसरे क्षेत्र की उन्नति रुकी हुई थी।

शर्त यह थी कि पालित पीठ में जिस किसी व्यक्ति की नियुक्ति की जाए, वह विदेश से उपाधि-प्राप्त हो।

पर श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन तो स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों से विदेश जा नहीं सके थे और उनके पास विदेशी उपाधि भी नहीं थी। तो अब क्या किया जाए ?

एक सुझाव यह था कि श्री रामन कुछ समय के लिए विदेश चले जाएं और वहां से उपाधि प्राप्त करके लौट आएं, तब उनकी नियुक्ति में कोई कठिनाई नहीं होगी। पर आशुतोष के स्वदेशाभिमान को यह ठीक नहीं लगा। वे दान-पत्र में लिखी इस शर्त को अनुचित मानते थे और इस शर्त को दान-पत्र से निकाल देना चाहते थे। उन्होंने इस कार्य में सर गुरुदास बनर्जी का सहयोग लेकर, इस शर्त का प्रभावशाली ढंग से विरोध किया। उनका कहना था कि यह शर्त हमारे राष्ट्रीय गौरव के विरुद्ध है और देश की प्रतिभा के लिए अपमानजनक है। यह शर्त भारतीयों को विदेशियों का पिछलग्गू और परमुखापेक्षी बनाने वाली है। अनुसन्धान के क्षेत्र में मौलिक कार्य करने वालों को

क्या आवश्यकता है कि उनके पास विदेशी उपाधि होनी ही चाहिए। उन्होंने साइंस कालेज की स्थापना के मूल उद्देश्यों की दृष्टि से भी इस शर्त को उद्देश्य-विरोधी बताया।

सर गुरुदास बनर्जी और सर आशुतोष मुकर्जी के प्रयत्नों से श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन की नियुक्ति के लिए विदेशी उपाधि प्राप्त करना अनावश्यक मान लिया गया। विज्ञानाचार्य के 'पालित पीठ' पर श्री रामन की नियुक्ति हो गई।

पालित पीठ के विज्ञानाचार्य

श्री रामन के सम्बन्धियों और मित्रों ने ऊंचे पद और वेतन छोड़कर, कालेज की कम वेतन वाली नौकरी स्वीकार न करने के लिए श्री रामन पर बहुत दबाव डाला। वे श्री रामन की आन्तरिक भावनाओं और ऊंचे उद्देश्य के लिए पद और धन के त्याग की बात को नहीं समझ पा रहे थे। पर महान उद्देश्य से प्रेरित त्यागशील पुरुष इन तुच्छ चीजों की कहां परवाह करते हैं! वे तो जीवन-दान तक के लिए सदा प्रस्तुत रहते हैं। यही लोग सच्चे कर्मयोगी हैं। वे अपने ऊंचे व्यक्तित्व और कर्म-कौशल के कारण जिस कार्य में भी हाथ डालते हैं, उसे श्रेष्ठकर्म की कोटि में पहुंचा

देते हैं। उनका कर्म फलाकांक्षा पर आधारित नहीं होता, यही कारण है कि उनके द्वारा किए गए कर्म की प्रभावकारी शक्ति साधारण लोगों के कर्म की अपेक्षा कई गुणा अधिक होती है।

श्री रामन ने हृदयस्थ अन्तर्यामी की प्रेरणा से बन्धु-बान्धवों का विरोध सहकर भी विज्ञान की उपासना करना ही श्रेष्ठ समझा। उस समय किसे पता था कि आज घाटे का सौदा लगने वाला यह काम कल को प्रभूत यश और अर्थ देने वाला बन जाएगा। जो युगस्थायी ख्याति आचार्य चन्द्रशेखर वेंकट रामन को विज्ञान-साधन द्वारा मिली, उच्च सरकारी अधिकारी तो क्या, राष्ट्रनायकों तक को वह नहीं मिलती है।

स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते

राजा की पूजा केवल उसके अपने देश में ही होती है किन्तु विद्वान् समस्त देशों में पूजा जाता है।

श्री रामन की स्वीकृति और नियुक्ति से सर आशुतोष मुकर्जी को बड़ी प्रसन्नता हुई। इस पद पर उन्हें आसीन कराके वे एक बड़ी चिन्ता से मुक्त हो गए। उन्होंने एक पुरुषरत्न को खोज लिया था और वे जानते थे कि उनके मार्ग-दर्शन से विज्ञान-साधकों को उद्देश्य-प्राप्ति में बड़ी सहायता मिलेगी। उनके सम्बन्ध में अपने हार्दिक उद्गार व्यक्त करते हुए,

श्री आशुतोष मुकर्जी ने अपने अभिभाषण में कहा था :

" हमारा परम सौभाग्य है कि हम सर तारकनाथ पालित द्वारा प्रदत्त निधि से संस्थापित 'पालित पीठ' के लिए श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन की सेवाएं उपलब्ध करने में सफल हुए हैं। भौतिक-विज्ञान के क्षेत्र में श्री रामन ने जो शोध-कार्य किया है, उससे उन्हें विज्ञान-जगत् में अच्छी प्रसिद्धि मिली है । इस प्रसंग में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि श्री रामन ने यह शोध-कार्य बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण सरकारी पद पर कार्य करते हुए, और उस पद के उत्तरदायित्व को पूर्ण रूप से निभाते हुए, शेष समय में विपरीत और विषम परिस्थितियों में किया है।

" श्री रामन ने ऊंचे पद और वेतन को छोड़कर विश्वविद्यालय में प्राध्यापक का पद स्वीकार कर अनुपम साहस और त्याग का उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनके इस कार्य की हृदय से प्रशंसा करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। मुझे खेद है कि विश्वविद्यालय की इस प्राध्यापकी के लिए उन्हें उचित वेतन भी न मिल सकेगा। श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन के इस आदर्श त्याग ने मुझे बहुत उत्साहित किया है। मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि इस विज्ञान मन्दिर में, जिसकी स्थापना के पीछे ऊंचा उद्देश्य है

और जिसके शुभारम्भ के लिए आज हम यहां एकत्र हुए हैं, सत्य के साधनों की कोई कमी नहीं रहेगी।"

उधर श्री रामन की कार्य-दक्षता से प्रभावित होकर, भारत सरकार ने उन्हें केन्द्रीय सचिवालय के वित्त-विभाग में और भी ऊंचे पद पर नियुक्त करने का निश्चय कर लिया था। किन्तु सरकार के इस निश्चय की सूचना मिलने से पूर्व ही श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन त्यागपत्र दे चुके थे और विज्ञान-साधना के लिए समर्पित हो चुके थे।

जुलाई १९१७ को उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्राध्यापक का कार्य प्रारम्भ किया था। तब से विज्ञान के साथ उनका जो गठबन्धन हुआ—वह अब भी वैसा ही है—जीवन-साथी जैसा।

पहले श्री रामन दिन-भर सरकारी नौकरी करते थे और बचे समय में विज्ञान-साधना। अब वे दिन में कॉलेज में पढ़ाते और शेष समय साइंस एसोसिएशन के कार्यों में लगाते।

'पालित पीठ' पर उनकी नियुक्ति के अनुसार उन्हें यह सुविधा प्राप्त थी कि वे अपना पूरा समय शोध-कार्य में लगाएं। छात्रों को पढ़ाना उनके लिए आवश्यक नहीं था। परन्तु फिर भी वे स्वेच्छा से छात्रों को पढ़ाने में रुचि लेते थे और इस कार्य को भी शोधकार्य

से कम महत्त्वपूर्ण नहीं समझते थे। वे मानते थे कि यदि मेधावी छात्रों का मार्ग-दर्शन किया जाए और उन्हें विज्ञान-साधना के लिए प्रेरित किया जाए तो शोधकार्य का विस्तार हो सकता है। अध्यापन उनकी रुचि का कार्य था। इससे वे सीधे सभी छात्रों के संपर्क में रहते थे और उनकी विज्ञान-सम्बन्धी जिज्ञासाएं शान्त करने और समस्याएं सुलझाने में प्रसन्नता का अनुभव करते थे। श्री रामन ऊंचे सरकारी पद की अपेक्षा, जहां उन्हें फाइलों में सिर खपाना पड़ता था, इस नये कार्य में अधिक आनन्द का अनुभव करते थे।

उनके सौम्य स्वभाव के कारण अध्यापकों और छात्रों में उनका बड़ा मान था। उनके मार्गदर्शन में छात्र बड़े उत्साह और अध्यवसाय से विज्ञान के अध्ययन में प्रवृत्त रहते थे। सारे कॉलेज का वातावरण उत्साह-पूर्ण बन गया था।

सन् १९१९ में साइंस एसोसिएशन के सचिव श्री अमृतलाल सरकार का देहान्त हो गया। सचिव का स्थान रिक्त हो गया। यह कार्य-भार भी आपके ऊपर आ पड़ा। इस पद पर आप अवैतनिक रूप से कार्य करने लगे। दोनों ही पद उत्तरदायित्वपूर्ण थे किन्तु आपने अपनी कर्मठता के कारण दोनों कार्यों को संभाल

लिया और दिनों-दिन कार्यों को अधिकाधिक सफलता से संचालित करने लगे। तभी तो कहा है कि 'कोऽतिभार: समर्थानाम्'। सामर्थ्य वालों के लिए भार कभी अधिक नहीं होता।

साइंस कॉलेज और साइंस एसोसिएशन—दोनों की ख्याति दिनों-दिन बढ़ती गई। विज्ञान का अध्ययन करने के लिए दूर-दूर से छात्र इस कॉलेज में प्रविष्ट होने लगे। इंडियन एसोसिएशन फॉर कल्टीवेशन ऑफ साइंस भी देश-विदेश में सर्वत्र प्रसिद्ध हो चली। साइंस एसोसिएशन के अन्तर्गत होने वाले शोध-कार्य का विवरण नियमित रूप से उसके बुलेटिनों में प्रकाशित होता रहता था। इससे एसोसिएशन और श्री रामन की प्रसिद्धि के साथ-साथ भारत को भी विज्ञान-जगत् में महत्त्व और मान मिला।

'पालित पीठ' के आचार्य पद का उत्तरदायित्व, छात्रों का मार्ग-दर्शन, साइंस एसोसिएशन के सचिव का कार्य-भार और विज्ञान के लिए क्षेत्रों का अनुसन्धान करना तथा उनका विवरण तैयार करना—इतना सारा कार्य वे करने लगे। उपयुक्त वातावरण, मनचाहा कार्य और सुविधाएं उपलब्ध होने से आचार्य रामन की प्रतिभा चमक उठी।

कलकत्ता विश्वविद्यालय के आचार्य का पद-भार

ग्रहण करने के बाद आपने प्रकाश और वर्ण (रंग) विषय पर अनुसन्धान कार्य प्रारम्भ किया। इस कार्य में उनकी छात्र-मण्डली ने भी सहयोग दिया। बादलों की वर्णछटा, इन्द्रधनुष आदि प्रकृत वर्णदृश्यों ने उन्हें मोह लिया। वे एक कलाकार की भांति इस वर्णछटा के रहस्यों का विश्लेषण और व्याख्या करने में प्रवृत्त हो गए। उन्होंने स्वयं कहा :

"हमें प्रकृति का जो रूप दिखाई देता है, उसमें अनन्त विविधता है। पर जो उसे प्यार करते हैं, उनके लिए वह सदा सुन्दर और रोचक रहती है। आकाश की नीलिमा, सूर्योदय और सूर्यास्त के वैभव, बादलों के सतत परिवर्तन के दृश्य, वन और खेतों के विविध रंग और रात को तारों-भरा आकाश—ये और दूसरे बहुतसे दृश्य, प्रकाश और रंग के उस अनन्त नाटक में हमारी आंखों के सामने से गुजरते हैं जिसे प्रकृति हमारे लाभार्थ खेलती है। वैज्ञानिक प्रकृति को समझ को आंखों से देखता है पर इसके कारण वह उसके सौन्दर्य से अप्रभावित नहीं रहता। अधिक सचाई से यह कहा जा सकता है कि समझ से हमारी दृष्टि परिष्कृत होती है और आकर्षण अथवा सौन्दर्य को अनुभव करने की शक्ति बढ़ती है।"

वैज्ञानिक की जिज्ञासा और कलाकार के सौन्दर्य-

बोध का अनूठा सम्मिश्रण हम आचार्य रामन के जीवन में देखते हैं ।

प्रथम विदेश-यात्रा

१६२१ ई० में ब्रिटिश साम्राज्य के विश्वविद्यालयों का सम्मेलन ऑक्सफोर्ड में आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन में कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर से श्री रामन भाग लेने गए ।

जहाज में समुद्र पार करते हुए उनका ध्यान समुद्र-जल के नील-वर्ण की ओर गया। प्रकाश और वर्णछटा अनुसन्धाता रामन के मन में प्रश्न जाग उठा : समुद्र का जल नीला क्यों है ? इस लम्बी समुद्र-यात्रा में समुद्र-जल की विविधतापूर्ण वर्णछटा के सौन्दर्य ने आपके कलाकार हृदय पर अमिट छाप डाली और वैज्ञानिक रामन के सामने अनुसन्धान का एक नया क्षेत्र खुल गया। उन्होंने निश्चय किया कि वे प्रकाश और वर्णछटा की इस समस्या का विश्लेषण-विवेचन करेंगे ।

ऑक्सफोर्ड में श्री रामन ने अपने खोज-कार्य के विषय में बड़ा प्रभावशाली व्याख्यान दिया। उनकी शोधों का विवरण सुनकर विभिन्न देशों से आए प्रतिनिधि बड़े चकित हुए। सभी ने उनके कार्य को सराहा।

ब्रिटिश साम्राज्य के विश्वविद्यालय के विद्वानों से उनका सीधा सम्पर्क हुआ। इसके बाद विदेशों के अनेक विश्वविद्यालयों ने उन्हें अपने यहां व्याख्यान देने के लिए निमंत्रित किया। उनकी ख्याति के साथ-साथ भारत में विज्ञान की प्रगति के बढ़ते चरण देश-देशान्तरों तक जा फैले।

सन् १९२१ में स्वदेश वापस आकर आचार्य रामन ने पारदर्शक पदार्थों में से होकर प्रकाश के गुजरने से होने वाले परिवर्तनों का अनुसन्धान प्रारम्भ किया। जो परिणाम प्राप्त हुए उनका विस्तृत विवरण कलकत्ता विश्वविद्यालय में १९२२ ई० में शोध-प्रबन्ध के रूप में प्रकाशित हुआ। इसके प्रकाशन के बाद कलकत्ता विश्वविद्यालय ने आपकी महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक उपलब्धियों के उपलक्ष्य में आपको डी० एस-सी० (साइंस के डॉक्टर) की उपाधि से सम्मानित किया।

विविध मान-सम्मान

सन् १९२४ में श्री रामन ब्रिटेन की रॉयल सोसायटी के फैलो निर्वाचित हुए। रॉयल सोसायटी का फैलो चुने जाने के बाद श्री रामन की विज्ञान-जगत् में विशेष प्रसिद्धि हो गई। रॉयल सोसायटी के १९२४ ई० के अधिवेशन में भाग लेने के लिए आप दूसरी बार

विदेश-यात्रा पर गए। इस बार आप तीन सप्ताह के लगभग वहां ठहरे। इस प्रवास का सदुपयोग भी आपने विज्ञान की साधना के लिए किया। लन्दन की डेवी फैराडे विज्ञान संस्था में आपने वहां हो रहे शोध-कार्य का और नवीन विधियों का ज्ञान प्राप्त किया। इन्हीं दिनों वहां कैल्विन शताब्दी-समारोह हो रहा था। आपने उसमें भी भाग लिया और समागत वैज्ञानिकों से सम्पर्क स्थापित किया।

यहीं पर आपको अमरीका की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक संस्था नार्मन ब्रिज विज्ञानशाला से वहां पधारने का निमन्त्रण मिला। इंग्लैण्ड से आप कनाडा होते हुए अमेरिका के लिए चल पड़े। कनाडा में रुककर वहां की विज्ञान संस्था 'ब्रिटिश एसोसिएशन फार द कल्टीवेशन ऑफ साइंस' के अधिवेशन में सम्मिलित हुए। यहां वे सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० मिलिकन से भी मिले और उनकी प्रयोगशाला भी देखी। वहां कुछ दिन आप रुककर अमेरिका चले गए। अमेरिका में अन्तर्राष्ट्रीय गणित कांग्रेस का सम्मेलन हो रहा था। आचार्य रामन ने उसमें भाग लिया। गणित कांग्रेस के एक विभाग, भौतिकी गणित के अधिवेशन में उन्हें अध्यक्ष पद का सम्मान मिला।

इसके बाद आप वाशिंगटन, शिकागो और फिला-

डेल्फिया विश्वविद्यालयों के निमन्त्रण पर वहां गए। फिलाडेल्फिया विश्वविद्यालय के अन्तर्गत स्थापित पासादेन की विख्यात प्रयोगशाला में आपने जटिल विज्ञान-विषयों पर व्याख्यान दिए। आपके श्रोताओं में विज्ञान के क्षेत्र के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और शोधकर्ता वैज्ञानिक बड़ी संख्या में नियमित रूप से आते रहे। विज्ञान के अतिरिक्त आपने भारत की संस्कृति, सभ्यता और प्राचीन शिक्षा-पद्धति और जीवनादर्श के बारे में व्याख्यान दिए जिससे वहां बड़ा शुभ प्रभाव पड़ा। कई स्थानों पर आचार्य रामन का अभिनन्दन किया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय गणित कांग्रेस में भाग लेने सभी देशो के प्रतिनिधि आए हुए थे। अनेक देशों के प्रतिनिधियों ने आपको निमन्त्रित किया। इनमें रूस भी था। आपने निकट भविष्य में रूस आने का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

अमेरिका से लौटते हुए आपने कई अन्य देशों की यात्रा की। वहां से आप इंग्लैण्ड वापस आए और फिर नार्वे आदि होते हुए बर्लिन (जर्मनी) भी गए। वहां विख्यात वैज्ञानिक नोल्स बोर से भेंट की और उनकी प्रयोगशाला देखी। इसी प्रयोगशाला में आचार्य रामन के शिष्य विधुभूषणराय शोध-कार्य कर रहे थे। उनके

कार्य की प्रगति को देखकर श्री रामन बहुत प्रसन्न हुए।

आचार्य रामन के सादे जीवन और महान् कार्य से सारा विज्ञान-जगत् बहुत प्रभावित हुआ। उनके कार्य से वे स्वयं तो यशस्वी हुए ही, भारत का गौरव भी बढ़ा। संसार ने देखा कि दासता के उन दिनों में भी भारतीय प्रतिभा कुंठित नहीं हुई है। सुविधाओं के अभाव में भी और बिना विदेश में शिक्षा पाए श्री रामन ने विज्ञान में जो मौलिक अनुसन्धान किए थे, विज्ञान में जिस नये कार्य-क्षेत्र का शुभारम्भ किया था, वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था और भविष्य में उसके दूर-गामी परिणाम प्रकट होने वाले थे।

कलकत्ता विश्वविद्यालय में विज्ञानाचार्य के पीठ पर आसीन होने के बाद पांच-छः वर्षों में ही उन्होंने अभूतपूर्व कार्य कर दिखाया था। इस उदीयमान वैज्ञानिक ने बाल-रवि की किरणों की भांति अपना उज्ज्वल शुभ्र प्रकाश ऊंचे शिखरों पर फैला दिया था।

आचार्य रामन इस दूसरी विदेश-यात्रा में लगभग दस मास तक विभिन्न देशों में घूमकर और प्रभूत सम्मान प्राप्त करके १८ मार्च, १९२५ ई० को स्वदेश लौट आए।

१९२५ ई० में आप रूस गए और वहां की विज्ञान

अकादमी के समारोह में सम्मिलित हुए। आपकी विज्ञान-सेवाओं को वहां खूब सराहा गया।

१९२८ ई० में इन्हें रोम का 'मेट्यूसी' पदक मिला। १९२९ में इन्हें नाइट की उपाधि प्राप्त हुई।

सन् १९३० में रायल सोसायटी लन्दन का ह्यूज पदक प्रदान किया गया।

१९४१ में, फिलाडेलफिया के फ्रैंकलिन इन्स्टीट्यूट ने इन्हें फ्रैंकलिन पदक देकर सम्मानित किया।

इसके अतिरिक्त पेरिस और रूस की विज्ञान-अकादमियों ने इन्हें अपना सम्मानित सदस्य बनाया। अमेरिका की ऑप्टिकल सोसायटी तथा अन्य अनेक विज्ञान सोसाइटियों ने इन्हें अपना विदेशी सदस्य मनोनीत किया। देश-देशान्तरों के अनेकानेक विश्व-विद्यालयों ने इन्हें डी० एस-सी० (डॉक्टर ऑफ साइंस) की उपाधियां प्रदान कीं।

श्री रामन को सम्मानित करके संस्थाएं अपने को कृतकृत्य समझने लगीं। १९२९ में भारत सरकार ने आपको 'सर' की उपाधि प्रदान की।

रामन प्रभाव पर नोबेल पुरस्कार

समुद्र-यात्रा करते समय समुद्र-जल के नीले रंग के बारे में अनुसन्धान करने का निश्चय श्री रामन ने

किया था। वापस लौटकर उन्होंने इस पर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने लिखा है :

"......पानी का रंग जो किसी परिस्थिति-विशेष में दिखाई देता है, इस बात पर निर्भर होता है कि उसके धरातल से प्रकाश का कितना परावर्तन होता है, उसमें प्रकाश के गुजरने की क्रिया में विशिष्ट अवशोषण द्वारा वर्णक्रम की कितनी लाल और पीली किरणें सोखी जाती हैं; और अन्त में, उसके भीतर प्रकाश किस प्रकार विसरित होता है। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि स्वच्छतम पानी का रंग भी निरीक्षण की परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है।"

रामन प्रभाव के बारे में वे स्वयं लिखते हैं :

१९२१ ई० के अन्तिम दिनों में इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए मुझे नई दिशा मिली और मैंने पारदर्शक माध्यम द्वारा गुजरने वाले प्रकाश के विसरण पर विधिवत् अनुसंधान करने की योजना हाथ में ली। आगामी वर्षों में ज्ञान के क्षेत्र में मौलिक प्रगति की संभावना से इस योजना को मैंने नियमित रूप से कार्यान्वित किया।

"......उक्त (रामन) प्रभाव को अत्यन्त सरल शब्दों में प्रस्तुत किया जा सकता है। एकवर्णी प्रकाश का

एक किरणपुंज जो सामान्यत: पारद-चाप लैंप से प्राप्त होता है, ठोस, द्रव या गैस अवस्था के गवेषणाधीन पदार्थ का चंक्रमण करता है। पदार्थ के आभ्यंतर में विसरित यह प्रकाश, जो नियमित रूप से परिगत प्रकाश से भिन्न दिशा में निर्गत होता है, स्पैक्ट्रमदर्शी द्वारा जांचा जाता है। इस प्रकार से देखे हुए स्पैक्ट्रम में ऐसी नई रेखाओं का व्यूह दिखाई पड़ता है जो पदार्थ को प्रदीप्त करने वाले किरणपुंज में नहीं होता।"

एक अन्य वैज्ञानिक ने रामन प्रभाव का वर्णन निम्न प्रकार से किया है :

"उन्होंने (श्री रामन ने) अपने प्रयोग के सम्बन्ध में एक रंग की किरण का प्रयोग करने के लिए पारे की भाप से उत्पन्न प्रकाश लिया और उसकी किरण को एक शीशे के गोले में पहुंचाया। उस गोले में कोई द्रव या वायव्य पदार्थ रखा। उस गोले में पहुंचती हुई किरण से समकोण बनाते हुए एक किरण-चित्रदर्शक यन्त्र रखा, जिससे उस गोले से निकलते हुए प्रकाश का चित्र पार्श्व की दिशा से लिया जा सके। पारे की भाप का प्रकाश गोले में पहुंचकर जब बिखरता तो उसकी शक्ति कुछ कम हो जाती; किंतु उससे उस गोले में रखे पदार्थ के अणु उत्तेजित होकर अपना भी कुछ प्रकाश उत्पन्न करके उल्लिखित प्रकाश में सम्मिलित

कर देते। इस कारण पारे वाली रेखा तो उत्पन्न होती ही, साथ में कई दूसरी रेखाएं भी उत्पन्न हो जातीं जिसका कारण गोले का पदार्थ था। यही रेखाएं 'रामन रेखाएं' कहलाती हैं और चित्रपट 'रामन चित्रपट' के नाम से प्रसिद्ध है।"

संक्षेप में यही वह रामन प्रभाव है जिसके लिए १९३० ई० में आचार्य चन्द्रशेखर वेंकट रामन को विश्व-प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार मिला था। इसका अनुसंधान उन्होंने १९२८ ई० में कर लिया था।

विज्ञान-विषय का नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले वे सर्वप्रथम भारतीय हैं। नोबेल पुरस्कार की घोषणा के बाद तो श्री रामन का नाम और काम विश्व-भर के वैज्ञानिकों की चर्चा का विषय बन गया। विभिन्न देशों से आने वाले निमंत्रणों का तांता लग गया। अनेक विश्वविद्यालय उन्हें अपने यहां बुलाकर रामन प्रभाव के सम्बन्ध में व्याख्यान करवाना चाहते थे।

'रामन प्रभाव' से विज्ञान के क्षेत्र में एक हलचल पैदा हो गई। एक वैज्ञानिक पत्रिका ने 'रामन प्रभाव' का मूल्यांकन करते हुए लिखा था :

"रामन प्रभाव की खोज ने वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में एक मौलिक दृष्टिकोण उपस्थित किया है,

जिसकी समानता विगत अनुसंधानों—'ऐक्सरेज' और 'रेडियो एक्टिविटीज' की खोजों से की जा सकती है।"

आचार्य रामन के शब्दों में :

"इस खोज के प्रकाशन के आगामी वर्षों में स्वदेश और विदेश में इस क्षेत्र में बड़ी सक्रियता उत्पन्न हुई। नये उपकरण में नये प्रकाशस्रोत और नई तकनीकों के साथ स्पैक्ट्रिमिकी की एक शाखा का सृजन हुआ तथा व्यापक साहित्य का सृजन हुआ।"

नोबेल पुरस्कार की स्थापना स्वीडन के नोबेल नामक धनाढ्य व्यक्ति ने की थी। इसके अन्तर्गत प्रतिवर्ष विभिन्न विषयों पर उच्च कोटि का कार्य करने वालों को पुरस्कृत किया जाता है। यह संसार का सबसे बड़ा और प्रसिद्ध पुरस्कार है।

नोबेल पुरस्कार की राशि, जो कि सवा लाख के लगभग होती है, प्रतिवर्ष १० दिसम्बर को स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में आयोजित समारोह में प्रदान की जाती है। नोबेल पुरस्कार के लिए आपको स्टाकहोम में निमंत्रित किया गया। इस बार आप अपनी पत्नी श्रीमती त्रिलोक सुन्दरी को भी साथ लेते गए।

१० दिसम्बर को पुरस्कार-वितरण के भव्य समारोह में आपको पुरस्कार की राशि प्रदान की गई। नोबेल पुरस्कार की घोषणा के साथ आपका नाम और

काम सब जगह चर्चा का विषय बन गया। विज्ञान विषय का किसी भारतीय को मिलने वाला यह प्रथम पुरस्कार तो था ही, समूचे एशिया में श्री चन्द्रशेखर वेंकट रामन विज्ञान का नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले पहले व्यक्ति थे। साहित्य विषय का नोबेल पुरस्कार इससे पूर्व हमारे देश के कवींद्र रवींद्रनाथ ठाकुर को मिल चुका था।

पुरस्कार प्राप्त करके स्टाकहोम से लौटते समय आपने फिर अनेक देशों की यात्रा की। सर्वत्र आपका हार्दिक स्वागत और अभिनन्दन हुआ। इस बार आप स्वीडन, नार्वे, डेनमार्क और जर्मनी निमंत्रित होकर गए। जर्मनी से आयरलैंड होते हुए ग्लासगो पहुंचे। ग्लासगो विश्वविद्यालय की ओर से आपको एल० एल० डी० की सम्मानित उपाधि प्रदान की गई। यहां से आप स्विट्जरलैंड, फ्रांस, इटली और सिसली होते हुए फ्रांस की राजधानी पेरिस पहुंचे। पेरिस विश्वविद्यालय ने भी सम्मानित उपाधि देकर आपका अभिनन्दन किया।

नोबेल पुरस्कार की घोषणा से 'रामन प्रभाव' वैज्ञानिकों का बहुचर्चित विषय बन गया। विज्ञान में प्रगति कर रहे यूरोप और अमेरिका के अनेक देशों में 'रामन प्रभाव' का अध्ययन होने लगा। परिणामस्वरूप

आगामी दस वर्षों में सैकड़ों शोध-निबन्ध और हजारों शोध-पत्र इस विषय पर लिखे गए और प्रकाशित हुए।

नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद आप दो वर्ष और अर्थात् १९३२ ई० तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में पहले की तरह कार्य करते रहे।

भारत सरकार ने आपसे अनुरोध किया कि विश्वविद्यालय की सेवा से अवकाश ग्रहण कर आप इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस के निदेशक का पद ग्रहण करें। आप इसपर सहमत हो गए और कलकत्ता विश्वविद्यालय की सेवा से मुक्त हो गए।

इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस में

अब आपकी नियुक्ति इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस के निदेशक पद पर हो गई। यह संस्था बंगलौर में थी। इसमें विज्ञान-शोध के लिए अच्छे साधन उपलब्ध थे।

वैज्ञानिक अनुसंधान करने वाले छात्र देश के कोने-कोने से यहां आते और शोध करते थे। श्री रामन जैसे विश्वविख्यात वैज्ञानिक के इस संस्था का निदेशक बन जाने से शोधार्थियों के लिए बड़ा आकर्षण हो गया। श्री रामन के निदेशन में कार्य करना सभी

गौरव की बात मानते थे। श्री रामन भी प्रतिभाशाली छात्रों में ज्ञानराशि का वितरण करके अपने को कृत-कृत्य मानते।

श्री रामन के कार्य का महत्त्व दो प्रकार का है। एक तो यह है कि उन्होंने भौतिकी में सर्वथा मौलिक अनुसन्धान किए और दूसरा यह कि उन्होंने बड़ी संख्या में दूसरे अन्वेषकों को प्रेरणा देकर और उनका मार्ग-दर्शन करके शिष्य मण्डली तैयार की और भारत में अनेक विज्ञानशालाओं की स्थापना में सक्रिय योग-दान दिया। परिणामस्वरूप भारत विज्ञान के क्षेत्र में दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करने लगा।

स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में तो इस दिशा में अभूतपूर्व उन्नति हुई। देश-भर में विभिन्न विज्ञान-शाखाओं की प्रयोगशालाओं का जाल-सा बिछ गया और भारतीय वैज्ञानिक भारत और भारत से बाहर के देशों में भी सक्रिय योगदान देने लगे।

श्री रामन का अनुसन्धान-क्षेत्र पर्याप्त विविधता-पूर्ण है। पहले आपने तार वाले वाद्यों पर अनुसन्धान किया। तत्पश्चात् प्रकाश और रंगों के बारे में। प्रकाश के साथ-साथ ध्वनि-विज्ञान के क्षेत्र में भी आपने महत्त्वपूर्ण कार्य कर दिखाया। और बाद में मणियों—चमक वाले पत्थरों—के प्रकाश-सम्बन्धी

आपके महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान हुए।

आपके अनुसन्धान यद्यपि मुख्यतया भौतिकी से सम्बन्धित हैं किन्तु रसायन और औद्योगिकी को भी उनसे बड़ी सहायता मिली है।

रामन इन्स्टीट्यूट की स्थापना

पांच वर्ष के लगभग बंगलौर की इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस में महत्त्वपूर्ण कार्य करने के पश्चात् आपने एक निजी प्रयोगशाला की स्थापना का संकल्प किया। वैसे तो आचार्य रामन स्वयं में एक संस्था हैं। उनके समस्त कार्य लोक-मंगल और विज्ञान की सच्ची साधना से प्रेरित हैं, फिर भी भावी विज्ञान-साधना के लिए उन्होंने रामन इन्स्टीट्यूट का शुभारम्भ किया।

विज्ञान से धन कमाने की बात उन्होंने कभी सोची नहीं, किन्तु संयमित और सादा जीवन बिताने के कारण जो बचत हुई थी तथा पुरस्कारस्वरूप प्राप्त जो धनराशि उन्हें मिली थी, उसका सदुपयोग उन्होंने रामन इन्स्टीट्यूट के लिए किया।

'परोपकाराय सतां विभूतयः।' 'सज्जन पुरुषों की सम्पत्ति परोपकार के लिए होती है' इस उक्ति को उन्होंने अपने जीवन में चरितार्थ कर दिखाया।

यह संस्था अपने जन्मकाल से देश-देशान्तरों में प्रसिद्ध है और विज्ञानिकों के लिए पुण्यतीर्थ के समान है। वे स्वयं भी चलते-फिरते तीर्थ जैसे हैं। 'तीर्थ-भूताः हि साधवः'। सज्जन पुरुष तीर्थ के समान ही होते हैं। रामन इन्स्टीट्यूट आज राष्ट्र की अमूल्य निधि है। वहां से प्रशिक्षित होकर निकलने वाले वैज्ञानिक राष्ट्र को समृद्ध और उन्नत बना रहे हैं। श्री रामन ने अपने दीप्तियुक्त व्यक्तित्व से अनेक व्यक्तित्वों को दीप्त किया है और आज भी यह प्रक्रिया सतत चालू है। 'एक दीप से जगे दूसरा'—इस तरह पूरी दीप-मालिका अपनी जगमग से इस उदीयमान राष्ट्र से अज्ञानान्धकार को नष्ट करने के पुण्य कार्य में प्रयत्नशील होकर उसकी शोभा को भी बढ़ा रही है।

'राष्ट्रीय आचार्य' और 'भारत-रत्न'

स्वतंत्र भारत को सरकार ने आपकी विज्ञान-साधना और महान् सेवाओं के प्रति राष्ट्र की श्रद्धा व्यक्त करने के लिए सन् १६४८ में आपको 'राष्ट्रीय आचार्य' का सम्मान दिया। आपको प्रतिमास तीन हजार रुपये की वृत्ति भी निश्चित कर दी गई जिससे आप स्वतंत्रतापूर्वक विज्ञान-साधना में लगे रहें।

स्वतंत्र भारत की सरकार द्वारा यह सम्मान प्राप्त करने वाले आप प्रथम व्यक्ति हैं।

इसके बाद सन् १६५४ में भारत के राष्ट्रपति की ओर से आपको 'भारत रत्न' के सर्वोच्च अलंकरण से अलंकृत किया गया। वह सर्वोच्च अलंकरण प्राप्त करने वाले भी आप सर्वप्रथम वैज्ञानिक हैं।

शांति के उपासक को लेनिन शांति पुरस्कार

आचार्य चन्द्रशेखर वेंकट रामन के जीवन-दर्शन को समझने के लिए हम उन्हीं के शब्दों का सहारा लेंगे। उन्होंने कहा है :

"नई भौतिकी ने नवीन ज्ञान के जिस विशाल परिमाण की सृष्टि की है, वह स्वाभाविक रूप से प्राकृतिक शक्तियों को भलाई और बुराई के लिए उपयोग करने की मनुष्य की बहुत बढ़ी हुई सामर्थ्य को दर्शाता है। भौतिकी ने प्रगति की इस अवधि में मानव के जीवन और कार्यों को सैकड़ों विभिन्न रीतियों से प्रभावित किया है। किन्तु मैं आपको यह नहीं भूलने देना चाहता कि हमारे विज्ञान के महानतम नेता सदा वे हुए हैं जिनका उद्देश्य केवल ज्ञान के लिए ज्ञान की वृद्धि करना रहा है।"

आचार्य रामन के जीवन में भारतीय संस्कृति के

अनुरूप ही निष्काम कर्म, त्याग और सेवा का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। विज्ञान के क्षेत्र में भी उन्होंने जो अनुसन्धान कार्य किया है, वह जहां मानव-जाति के ज्ञान में महत्त्वपूर्ण वृद्धि करता है, वहां उसका उपयोग मानव की आक्रामक वृत्ति को प्रोत्साहन देने वाला नहीं है। मानव जाति का कल्याण और ज्ञान-वृद्धि ही उनका उद्देश्य है। उनकी खोजों की दूसरी विशेषता यह है कि वे मौलिक हैं—आचार्य रामन की नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा की परिचायक।

शांति के उपासक और ज्ञान के ध्येयनिष्ठ इस महामानव को विज्ञान-साधना के प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धा प्रकट करने के लिए सन् १९५८ में सोवियत संघ ने वहां का सर्वोच्च 'लेनिन शांति पुरस्कार' आचार्य रामन को सम्मानित करने के लिए दिया। यहां भी आचार्य रामन वैज्ञानिकों में यह पुरस्कार प्राप्त करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति हैं। यह पुरस्कार उन्हें अपने वैज्ञानिक कार्यों द्वारा विश्व के राष्ट्रों में शान्ति बनाए रखने के लिए दिया गया था।

ज्ञान की सच्ची उपासना और लोक-मंगल की कामना से प्रेरित व्यक्तित्व किस प्रकार देश और काल की सीमाओं का अतिक्रमण करके, मानव मात्र की मूलभूत एकता को प्रतिपादित करता है, आचार्य

रामन इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। आचार्य रामन को संसार में जो मान-सम्मान मिला, उस पर विचार करें तो स्पष्ट पता चलेगा कि यह उनके कार्यों और गुणों का सम्मान है। 'गुणाः पूजास्थानम्'—गुणों की पूजा होती है।

आचार्य रामन की विज्ञान-साधना की बारीकियों को समझ पाना साधारण लोगों के लिए संभव नहीं है। वैज्ञानिक ही उनके मूल्य-महत्त्व को ठीक से आंक सकते हैं। पर उनके महान् मानवीय गुणों को हम समझ ही सकते हैं।

'सादा जीवन उच्च विचार' के वे धनी हैं। सरल स्वभाव के आचार्य रामन यश के शिखर को छूकर भी विनयशील हैं। अभिमान तो उन्हें छू भी नहीं गया है। वे महान कर्मयोगी हैं। निष्काम कर्मयोगी। और 'योगः कर्मसु कौशलम्' (कर्म में कुशलता ही योग है) को मानें तो वे महान् कर्मयोगी हैं। प्रायः समझा जाता है कि विज्ञान और कला परस्पर विरोधी हैं। पर आचार्य रामन ने विज्ञान-साधना में ऐसी कुशलता और कलाकार की सौंदर्य-दृष्टि का परिचय दिया है कि दोनों में सामंजस्य स्थापित हो गया है। उन्हीं के शब्दों में :

"···मैंने उस प्रेरणा की प्रकृति के बारे में कुछ

नहीं कहा है जो कुछ श्रेष्ठ व्यक्तियों को विज्ञान की सेवा में लगाने और परिश्रमी जीवन बिताने को बाध्य करती है। यह इस व्यापक प्रश्न का ही एक भाग है कि वह क्या है जो मनुष्य को किसी प्रकार के आदर्श-वादी कार्य के प्रति अपने को समर्पित करने को बाध्य करता है। मैं समझता हूं कि यह सरलता से स्वीकार कर लिया जाएगा कि विज्ञान के साधक को उसकी चालक शक्ति उस वस्तु से प्राप्त होती है जो अनिवार्यतः एक सृजनात्मक प्रवृत्ति है। चित्रकार, मूर्तिकार, वास्तु-कार और कवि, प्रत्येक प्रकृति से अपने अनुरूप स्फुरणा प्राप्त करता है और अपने माध्यम द्वारा उसकी प्रतिमा अंकित करने का प्रयास करता है।

"वैज्ञानिक प्रकृति का केवल एक अध्येता है और वह इन्हीं के समान उससे अपनी स्फुरणा लेता है। वह अपने गहन विचारों के माध्यम से अपने मस्तिष्क में उसके चित्र बनाता अथवा गढ़ता है। वह उसकी अनन्त जटिलताओं को कुछ सरल सिद्धान्तों अथवा क्रियाओं के उन तत्त्वों में विभाजित करने का प्रयत्न करता है जिन्हें वह प्रकृति के नियम कहता है। इस काम में वैज्ञानिक कला के अन्य रूपों की भांति अपने को कठिन साधना के उन नियमों से बांधता है जो उसने अपने लिए बनाए हैं और जिन्हें वह तर्क कहता

है। वैज्ञानिक हमारे लिए प्रकृति का जो चित्र तैयार करता है, उसका इन नियमों से शासित होना अनिवार्य है। दूसरे शब्दों में, उसमें तर्क-संगत एकता होना जरूरी है। बौद्धिक सौन्दर्य वास्तव में उच्चतम प्रकार का सौंदर्य है। विज्ञान, दूसरे शब्दों में : प्रकृति की प्रतिमा अंकन के कार्य में मनुष्य की सौंदर्य और बौद्धिक भावनाओं का एकीकरण है, इसलिए यह सृजनात्मक कला का उच्चतम स्वरूप है।"

इस समय उनकी अवस्था अस्सी वर्ष हो चुकी है। आज भी वे युवकोचित उत्साह के साथ विज्ञान को अखण्ड साधना में प्रवृत्त हैं। अनुसंधान करने वालों के पथ-प्रदर्शक और प्रेरणादाता तो वे हैं ही। गुणी और प्रतिभाशाली वैज्ञानिक जनों को आगे बढ़ाना, स्वतंत्र अभिव्यक्ति तथा विकास की व्यापक सुविधाएं प्रदान करना—इसी सबके लिए तो उन्होंने रामन इन्स्टीट्यूट की स्थापना की थी और यह संस्था और संस्थापक की उद्देश्य-पूर्ति में, उसी की देखरेख में गत तीन दशकों से कार्य कर रही है।

आचार्य चन्द्रशेखर वेंकट रामन शतायु और दीर्घायु हों, जिससे उनके ज्ञान और अनुभव का अधिकाधिक लाभ अनुसंधानकर्ता उठा सकें।

●

जीवन-ज्योति माला

हरगोविन्द खुराना
जगदीशचन्द्र वसु
चन्द्रशेखर वेंकट रमन
प्रफुल्लचन्द्र राय
मेघनाद साहा
शान्तिस्वरूप भटनागर
रामानुजन्
बीरबल साहनी
होमी जहाँगीर भाभा
जयन्त नार्लीकर
आइन्स्टाइन
एडीसन
न्यूटन
मेरी क्यूरी
गैलिलियो
जेम्स वाट
ग्राहम बेल
मार्कोनी
राइट बन्धु
लुई पाश्चर

लेखक : **सन्तराम वत्स्य**

प्रत्येक का मूल्य : दो रुपये पचास पैसे

ज्ञान भारती, दिल्ली द्वारा प्रकाशित